Journal of Research and Development
A Multidisciplinary International Level Referred and Double Blind Peer Reviewed, Open Access
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-18, Issue-1(A)| January - 2026

Original Article

उराँव जनजाति का ऐतिहासिक व सामाजिक परिदृश्य का अध्ययन

प्रज्ञा कुमारी[1], प्रो. अनिल कुमार[2]
[1]शोधार्थी, इतिहास विभाग, डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी विश्वविद्यालय, राँची।
[2]पर्यवेक्षक, इतिहास विभाग, सेवानिवृत प्रो., डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी विश्वविद्यालय राँची।
Email: pragyanayak231@gmail.com

Manuscript ID:
JRD -2026-180120
ISSN: 2230-9578
Volume 18
Issue 1(A)
Pp. 96-99
January - 2026
Submitted: 16 Dec. 2025
Revised: 26 Dec. 2025
Accepted: 11 Jan. 2026
Published: 31 Jan. 2026

सारांश

झारखण्ड की जनजातियों की संस्कृति और परंपराऐं बहुत समृद्ध है। इन जनजातियो की अपनी भाषा वेशभूषा और रीति–रिवाजो को लेकर अपनी–अपनी मान्यता है यह प्रकृति से जुड़े हुए है इनके हर कार्यों में प्राकृतिक के प्रति प्रेम का भाव साफ तौर से नजर आता हैं। झारखण्ड में 32 प्रकार की जनजातियाँ पाई जाती है, जिनमे से उराँव दूसरी सबसे बड़ी जनजाति है। उराँव का आगमन मुण्डा के आगमन के पश्चात् हुआ, इस जनजाति ने सदियों से इस क्षेत्र में मूल निवासी के रूप में खुद को सदर्भित किया है और अपनी विशिष्ट सांस्कृतिक पहचान को बचाए रखा है। इन जनजातियों का प्रकृति के साथ एक अनोखा संबंध रहा है जो उनके जीवनशैली और परंपराओं में पूर्ण रूप से देखने को मिलता आया है। उनके दैनिक जीवन, कृषि पद्धतियों और सांस्कृतिक रीति–रिवाजों में तथा उनके सामाजिक संरचना में भी प्राकृतिक संसाधनों का मुख्य भुमिका रहा हैं, जैसे–सरहुल पर्व, गोत्र, नृत्य, तथा संगीत इत्यादि। प्रारम्भिक काल से झारखंड की जनजातियों का प्राकृतिक संसाधनों के साथ गहरा और परंपरागत संबंध है।

बीज शब्द : *जनजाति, उराँव, मूल निवासी, गोत्र, कुडुख, सामाजिक संरचना।*

शोध–विधि

प्रस्तुत शोध–आलेख में (उराँव जनजाति का ऐतिहासिक व सामाजिक परिदृश्य का अध्ययन) के अध्ययन हेतु विश्लेषणात्मक एवं वर्णनात्मक विधि के तहत ऐतिहासिक आयामों का गहन विश्लेषण किया गया है।

शोध–उद्देश्य

प्रस्तुत शोध–आलेख का उद्देश्य (उराँव जनजाति का ऐतिहासिक व सामाजिक परिदृश्य का अध्ययन) का ऐतिहासिक संदर्भ में शोध अध्ययन करना और उसके इतिहास की खोज करना है।

मुख्य–प्रतिपाद्य

ऐतिहासिक अध्ययन :

झारखण्ड में 32 जनजातियाँ है जिसमें उराँव जनजाति की संख्या अत्याधिक हैं तथा जनसंख्या के आधार पर संथाल के पश्चात् दूसरे स्थान पर हैं। हालाँकि आम बोलचाल और आधिकारिक दस्तावेजों में उन्हें अक्सर 'उराँव' के रूप में संदर्भित किया जाता है। माना जाता है कि 'कुडुख' शब्द की ऐतिहासिक जड़ें पौराणिक राजा करष से जुड़ी हैं जिनके शासनकाल से जुड़ी कई मिथक कथाऐं प्रचलित हैं। इन कथाओं के अनुसार, 'करष' ने करुष नामक क्षेत्र पर शासन किया, जिसका फैलाव रीवा से लेकर बिहार के मगध के प्राचीन क्षेत्र तक था (मिंज, 1996, पृ. 30)। जिसमें शाहाबाद केंद्र बिंदु पर था (चौधरी, 1966, पृ. 47)।

'कुडुख' शब्द एक प्राचीन द्रविड शब्द से निकला है जिसका अर्थ है 'मनुष्य'। यह व्याख्या जनजाति के ऐतिहासिक दृष्टिकोण से मेल खाती है, जिसमें राजा 'कड़ख' को विशेष व्यक्ति की मान्यता मिली हुई हैं। जिसे लगभग पैतृक पूर्वज के रूप में देखा जाता है, जो 'मनु' को मानवता के पूर्वज के रूप में देखे जाने के समान कथा को भी प्रदर्शित करता हैं (राय, 1915, पृ. 10)। भिन्न–भिन्न विद्वानों का मानना है की कृषि उराँव लोगों का प्राथमिक व्यवसाय था जिसके कारण उन्हें 'कृषक' के रूप में वर्णित किया गया, जिसका अर्थ है 'किसान', जो आगे चलकर कृषक–कृखक–कुरुख के रूप में विकसित हुआ।

Creative Commons (CC BY-NC-SA 4.0)
This is an open access journal, and articles are distributed under the terms of the Creative Commons Attribution-NonCommercial-ShareAlike 4.0 International Public License, which allows others to remix, tweak, and build upon the work noncommercially, as long as appropriate credit is given and the new creations ae licensed under the idential terms.

Address for correspondence:
प्रज्ञा कुमारी, शोधार्थी, इतिहास विभाग, डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी विश्वविद्यालय, राँची।

How to cite this article:
कुमारी, . प्रज्ञा ., & कुमार,, . अनिल . (2026). उराँव जनजाति का ऐतिहासिक व सामाजिक परिदृश्य का अध्ययन. Journal of Research & Development, 18(1(A)), 96–99. https://doi.org/10.5281/zenodo.18617437

Quick Response Code:
Website: https://jrdrvb.org/
DOI: 10.5281/zenodo.18617437
OPEN ACCESS

Journal of Research and Development
A Multidisciplinary International Level Referred and Double Blind Peer Reviewed, Open Access
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-18, Issue-1(A)| January - 2026

झारखण्ड में आगमन के पश्चात् उराँव अपने उन्नत कृषि कौशल और औजारों के लिए पहचाने जाने लगे अतः इससे कुडुख शब्द से उराँव जनजाति का सम्बंध कृषि से किस तरह रहा होगा, उसके विभिन्न पहलूओं को भी उजागर करता है। इसलिए कुडुख शब्द का उराँव जनजाति में किस रूप में इस्तेमाल किया जाता होगा, उन सभी आयामो के सटीक अर्थ का पता चलता हैं। सबसे पहले यह उन्हें कुडुख क्षेत्र के निवासियों के रूप में उनके पूर्वजों के इतिहास से जोड़ता है, जिसके परिणामस्वरूप 'करुष' और 'कुडुख' नाम सामने आए। दूसरे यह उनके पूजनीय राजा 'कर्ष' से उसके संबंध स्थापित करता है, जो यह सुझाव देता है कि जिस तरह मानवता मनु से ली गई है, उसी तरह कुडुख लोग अपनी पहचान कर्ष से लेते हैं। यह शब्द उनकी कृषि विशेषज्ञता को भी दिखलाता है। कुछ विद्वानो का मानना है की इनके पडोसी हिंदूओं ने इन्हे कृषक बोलना प्रारम्भ किया जो कलान्तर मे 'ष' का 'ख' उच्चारण तथा 'र' का उराँवों के अनुनासिक स्वभाव के वजह से 'ड' उच्चारण के फलस्वरूप अपभ्रंशित होकर कुडुख रूप में प्रचलित हुआ (मिंज, 1996, पृ. 30)। जो मुंडाओं द्वारा इस्तेमाल किए जाने वाले शब्द होरा के समान है। हन् ने इस शब्द को द्रविड़ सीथियन के मूल शब्द 'कुरूक' से जोड़ने का प्रयास किया हैं।

डाल्टन इस समझ को और मजबूत करते हुए यह प्रस्ताव देते हैं कि कुडुख कोंकण का ही एक बिगड़ा रूप हो सकता है, उनकी सूचना के अनुसार इस जनजाति का मूल निवास स्थल कोंकण था (डाल्टन, 1872, पृ. 245)। जो इस शब्द की ऐतिहासिक समृद्धि को बढ़ाता है। अतः समग्र रूप से देखा जाए तो कुडुख और उराँव की उत्पति की खोज उनके बहुमुखी प्रतिभा एवं कौशल से जुड़े विभिन्न आयामो को उजागर करता है. साथ ही साथ इस जनजाति के सांस्कृतिक विरासत, कृषि प्रथाओं और क्षेत्र के व्यापक ऐतिहासिक आख्यानो पर भी प्रकाश डालता हैं। कुडुख भाषा की जड़े कोंकण के जीवंत क्षेत्र में गहरी हैं, जहाँ उनकी सांस्कृतिक पहचान आकार लेने लगी। ग्रियर्सन के शोध से पता चलता है कि 'कुडुख' शब्द द्रविड शब्द 'करुग' से निकला है, जिसका अर्थ है 'चील जो उराँव (मिंज, 1996, पृ. 31) के एक विशिष्ट कबीले से जुड़ा एक कुलदेवता का एक रूप हैं, जिससे इस बात की भी पुष्टि होती हैं की इस जनजाति का संबंध एवं इनकी पहचान इन प्रतीको के आधार पर है, अतः यह सांस्कृतिक प्रतीकों के महत्व को भी उजागर करता है। गियर्सन ने आगे विस्तार से बताया कि 'कुडुख' नाम धीरे–धीरे उराँव जनजाति का पर्याय बन गया इस वैचारिक आधार पर ब्रज बिहारी कुमार का काम 'कुडुख कोष' सीधे 'कुडुख' शब्द को उराँव पहचान से जोड़ता है, जिससे जनजाति की अनूठी भाषाई और सांस्कृतिक विरासत की पुष्टि होती है। 1971 की भारत में, कुडुख भाषा के लगभग 141,084 वक्ता हैं, जो न केवल बिहार में बल्कि मध्य प्रदेश, पश्चिम बंगाल, ओडिशा और अन्य राज्यों में भी मौजूद है, जो कुडुख–भाषी समुदाय के भीतर व्यापक भौगोलिक विस्तार और सांस्कृतिक विविधता को उजागर करता है। कुमार कुडुख भाषा के लिए वैकल्पिक नामों को भी स्वीकार करते हैं, जैसे कि ढांगरी, किसानी और किसान–कुडुख, जो इस भाषाई परिदृश्य के भीतर बोलियों की समृद्ध ताने–बाने को दर्शाता है।

हिंदी भाषा के व्यापक संदर्भ में, 'धंगर' शब्द का इस्तेमाल आमतौर पर विभिन्न आदिम जनजातियों का वर्णन करने के लिए किया जाता है, जिसमें उराँव लोगों और अन्य लोगों की मेहनती प्रकृति शामिल है। उनके मजबूत कार्य नैतिकता ने उन्हें मजदूरों के रूप में एक सराहनीय प्रतिष्ठा दिलाई है। इस मेहनतीपन के कारण बाहरी लोग उन्हें 'धंगर' के नाम से पुकारने लगे उनकी सूचना के अनुसार इस जनजाति का मूल निवास स्थल कोंकण था (डाल्टन, 1872, पृ. 245)। ऐतिहासिक रूप से, जब हिंदुओं ने पहली बार मेहनती मजदूरों के रूप में उराँवों का सामना किया, तो उन्हें 'धांगर' नाम दिया गया। समय के साथ यह स्तर सामान्य हो गया और इसमें कई आदिवासी समूह शामिल होने लगे जिसके परिणामस्वरूप कुडुख भाषा को 'धांगरी' के रूप में संदर्भित किया जाने लगा। कुछ क्षेत्रों में, विशेष रूप से ओडिशा में, कुडुख भाषा को प्यार से 'किसान भाषा' कहा जाता है, जो उराँव जनजाति के कृषि से प्राथमिक संबंध को दर्शाता है। इसके अतिरिक्त, राँची के पूर्व में मानभूम के पास रहने वाले उराँव मिट्टी की दीवारें, बांध और मिट्टी के तटबंध बनाने में अपने कौशल के लिए प्रसिद्ध हैं, जिससे उन्हें 'मोदी' की उपाधि मिली है (मिंज, 1996, पृ. 31)। चूंकि उराँव आर्थिक अवसरों की तलाश में त्रिपुरा, असम, पश्चिम बंगाल और दरभंगा जैसे स्थानों पर चले गए हैं. इसलिए उन्होंने झारखण्ड क्षेत्र के अन्य उराँवों के साथ अपनी भाषा, सांस्कृतिक प्रथाओं और संबंधों को सफलतापूर्वक बनाए रखा है। अपनी विरासत को संरक्षित करने में यह लचीलापन उनकी जड़ों के प्रति उनके समर्पण को उजागर करता है। जबकि 'उराँव' नाम ने प्रमुखता प्राप्त कर ली है, यह अपने साथ एक सूक्ष्म इतिहास लेकर आता है। डाल्टन ने उल्लेख किया है कि हिंदू इस जनजाति को उनकी पारंपरिक खानाबदोश जीवनशैली के कारण 'उराँव' कहते थे, क्योंकि उन्हें अक्सर एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाते देखा जाता था, जिससे 'उड़न' या 'उरन' शब्द उत्पन्न हुए (डाल्टन, 1872, पृ. 245)। वैकल्पिक रूप से एस. सी. राय एक अलग दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हैं, यह सुझाव देते हुए कि उराँव समुदाय के कुछ सदस्य इस नाम की व्याख्या मूल रूप से उन्हें नीचा दिखाने के इरादे से करते हैं, इसे पौराणिक चरित्र रावण से जोड़ते हैं। इस कथा के अनुसार, 'रावणपुत' जिसका अर्थ है 'रावण के वंशज' समय के साथ 'उराँव' में सरल हो गया (मिंज, 1996, पृ 31)। यह पहचानना महत्वपूर्ण है कि 'उराँव' एक ऐसा नाम है जो बाहरी धारणाओं और आंतरिक इतिहास दोनों के अवशेषों को साथ लेकर चलता है। हालाँकि, कई समुदाय के सदस्य खुद को 'कुडुख' के रूप में बोला जाना ज्यादा पसंन्द करते हैं एवं उस शब्द में निहित ऐतिहासिक और सांस्कृतिक अर्थों को महत्व देते हैं।

'उराँव' नाम आज व्यापक रूप से प्रचलित हो चुका है और सरकारी दस्तावेजों में इन्हें इसी नाम से पहचाना जाता है। उराँव समुदाय के कुछ व्यक्तियों ने अपनी उत्पत्ति और 'उराँव' शब्द की गरिमामयी व्याख्या के लिए एक धार्मिक कथा का उल्लेख किया है। इस कथा के अनुसार, एक ऋषि घने जंगल में तपस्या में लीन थे। महीनों तक बिना भोजन और जल के ध्यान मग्न रहने के कारण उनका शरीर दीमक की मिट्टी से ढक गया और उस पर कांटेदार लताएं और बेलें चढ़ गई। एक दिन एक लकड़हारे ने इस ढांचे को दीमक की मिट्टी में ढके तने के रूप में देखा और कुल्हाड़ी की पीठ से मिट्टी साफ करने की कोशिश की। लकड़हारा यह देखकर स्तब्ध रह गया कि मिट्टी के नीचे एक जीवित ऋषि थे। ऋषि का ध्यान भंग हो गया, और उनके सीने में चुभा हुआ कांटा गहराई से घुस गया, जिससे रक्त बहने लगा। ऋषि ने रक्त को जमीन पर गिरने नहीं दिया। उन्होंने कोरकोटा पत्ते का एक पात्र बनाया और रक्त उसमें एकत्र किया। इसके बाद उस पात्र से एक भाई और बहन (भविष्य के उराँव

Journal of Research and Development
A Multidisciplinary International Level Referred and Double Blind Peer Reviewed, Open Access
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-18, Issue-1(A)| January - 2026

समुदाय के पूर्वज) प्रकट हुए। भाई–बहन ने ऋषि से अपनी आजीविका के बारे में पूछा, तो उन्होंने उन्हें जंगल काटकर कृषि करने का आदेश दिया। ऋषि ने कहा कि खेती से उनकी जीविका चलेगी और जो भी याचक आए, उसे उदारता से दान देना। चूंकि वे ऋषि के उर (सीने) से उत्पन्न हुए थे, उन्हें उराँव कहा गया (मिंज, 1996, पृ. 32)। इस कथा से यह स्पष्ट होता है कि उराँव समुदाय का संबंध ऋषि परंपरा से है और कृषि उनका प्रमुख पेशा रहा है।

उराँवों का मूल स्थान एवं झारखण्ड में आगमन :

उराँव समुदाय के मूल स्थान को लेकर विद्वानों में एकमत नहीं है। यह तथ्य स्वीकार किया गया है कि वे पूर्व द्रविड़ मूल के हैं और उनके प्रारंभिक जीवन का केंद्र भारत का दक्षिणी भाग था। हालांकि यह समझना कठिन है कि वे दक्षिण भारत में किस देश या क्षेत्र से आए या बाहुई भाषा, कुडुख भाषा के समान कन्नड़ भाषा से 75 भूत 6 जो द्रविड़ भाषा परिवार की एक प्रमुख शाखा है। बलूचिस्तान के ब्राहुई क्षेत्र में बोली जाने वाली बाहुई भाषा कुडुख भाषा के समान है जो द्रविड़ सभ्यता के इस क्षेत्र में प्रभाव और उपस्थिति को रेखांकित करती है।

सामाजिक अध्ययन :

उराँव जाति में परिवार को सामाजिक व्यवस्था की सबसे छोटी और बुनियादी इकाई माना जाता है। यही परिवार अन्य सामाजिक संस्थाओं का निर्माण करता है। उराँव समाज का परिवार पितृसत्तात्मक और पितृवंशीय (पिता या पुरुष प्रधान) होता है, जिसमें परिवार का प्रमुख अर्थात् पिता घर का मालिक होता है। घर के सभी निर्णय और कार्य उसकी इच्छा अनुमोदन और सहयोग से होते हैं। सामान्यतः उराँव परिवार एकल होता है, जिसमें पति–पत्नी और उनकी अविवाहित संतान रहती है। विवाह के बाद लड़की अपने ससुराल चली जाती है और लड़के अलग घर बसाते हैं। हालांकि यदि पत्नी बांझ हो या संतान उत्पन्न न कर सके तो पति को दूसरी पत्नी रखने की अनुमति है। संयुक्त परिवार की व्यवस्था उराँव समाज में बहुत कम देखने को मिलती है।

उराँव समाज में उत्तराधिकार पितृवंशीय होता है, यानी संपत्ति और अधिकार केवल पुरुषों में ही जाते हैं। लड़के अपने पारिवारिक गोत्र (कुल) में रहते हैं, जबकि लड़कियाँ विवाह के बाद दूसरे परिवार में चली जाती हैं और इसलिए उन्हें पैतृक संपत्ति में कोई अधिकार नहीं होता। इसके साथ ही लड़कियां धार्मिक अनुष्ठानों या देवता की बलि जैसे आयोजनों में भी भाग नहीं लेतीं। संपत्ति और धार्मिक कर्तव्यों में उनका कोई हस्तक्षेप नहीं होता। यह उराँव समाज की एक मजबूत परंपरा और विश्वास है। पिता की मृत्यु के बाद संपत्ति को समान रूप से लड़कों में बांट दिया जाता है। हालांकि, कभी–कभी बड़े बेटे को संपत्ति का थोड़ा अधिक हिस्सा मिलता है, जिसे 'ज्येठांग' कहा जाता है। संपत्ति का बंटवारा पिता की मृत्यु के बाद ही होता है, लेकिन यदि पिता जीवित रहते हुए संपत्ति का बंटवारा कर लें, तो वह एक हिस्सा खुद के लिए रखता है, जो उसके मरने के बाद फिर लड़कों में बंटता है। दूसरी पत्नी से जन्मे लडकों को पहली पत्नी से जन्मे लड़कों से कम संपत्ति मिलती है। इसके अलावा, यदि कोई लड़का समाज से बहिष्कृत हो चुका है और उसे पुनः समाज में स्वीकृति नहीं मिली है, तो उसे संपत्ति में कोई हिस्सा नहीं मिलता। यदि किसी उराँव व्यक्ति की मृत्यु से पूर्व उसके किसी पुत्र का देहांत हो गया हो, लेकिन वह पुत्र बच्चों को छोड़कर गया हो, तो उन पोते–पोतियों को उनके पिता का हिस्सा मिलता है।

इसके अतिरिक्त दत्तक पुत्र को यदि वह अपने गोत्र का है, तो संपत्ति का अधिकार प्राप्त होता है। इस प्रकार उराँव समाज में संपत्ति का वितरण और उत्तराधिकार स्पष्ट रूप से पितृवंशीय और पारंपरिक रूप से तय किया जाता है। लड़का समाज से बहिष्कृत हो चुका है और उसे पुनः माँ में स्वीकृति नहीं मिली है, तो उसे संपत्ति में कोई हिस्सा नहीं मिलता। यदि किसी उराँव व्यक्ति की मृत्यु से पूर्व उसके किसी पुत्र का देहांत हो गया हो, लेकिन वह पुत्र बच्चों को छोड़कर गया हो, तो उन पोते–पोतियों को उनके पिता का हिस्सा मिलता है। इसके अतिरिक्त दत्तक पुत्र को यदि वह अपने गोत्र का है, तो संपत्ति का अधिकार प्राप्त होता है। इस प्रकार, उराँव समाज में संपत्ति का वितरण और उत्तराधिकार स्पष्ट रूप से पितृवंशीय और पारंपरिक रूप से तय किया जाता है।

उराँव समाज में लोग विभिन्न टोटेमिक गोत्रों में बांटे जाते हैं, जिन्हें **'किली'** कहा जाता है। एक किली वह समूह होता है, जिसमें सभी सदस्य खुद को एक ही पूर्वज से संबंधित मानते हैं। प्रसिद्ध मानवशास्त्री लेविस मॉर्गन ने मातृ–गोत्र और पितृ–गोत्र के बीच अंतर किया है, जबकि नृशास्त्रियों ने टोटेमिक गोत्र की व्याख्या करते हुए बताया है कि इन गोत्रों के सदस्य किसी विशेष पशु–पक्षी या प्राकृतिक वस्तु को अपना प्रतीक मानते हैं। राय के अनुसार, गोत्र की उत्पत्ति को स्पष्ट करना कठिन है, लेकिन पारंपरिक विचार के अनुसार जिन्होंने नदी घाटी में निवास किया, उन्होंने कछुआ या मछली को अपना टोटेम माना, जैसे एक्का (कछुआ) और मिंज (मछली)। इसी तरह जो लोग बाघों से भरे जंगलों में रहते थे उन्होंने बाघ को अपना टोटेम माना।

निष्कर्ष

उराँव जनजाति झारखंड के जनजातीय समाज का एक अत्यंत महत्वपूर्ण और सशक्त अंग रही है। उराँव जनजाति का इतिहास, उनकी भाषा, उनकी सामाजिक संरचना तथा सांस्कृतिक परंपराएँ आपस में जुड़कर एक समग्र पहचान का निर्माण करती है। उराँव समाज का जीवन प्रारंभ से ही प्रकृति पर आधारित रहा है। भूमि, जल तथा जंगल उनके अस्तित्व का आधार रहे हैं। उनके पर्व–त्यौहार, रीति–रिवाज और सामाजिक गतिविधियाँ, कृषि चक्र और प्राकृतिक परिवर्तनों से जुड़ी रही है। इससे स्पष्ट होता है कि उराँव जनजाति का जीवन प्रकृति के साथ संतुलन और सामंजस्य का प्रतीक रहा है।

कुडुख भाषा उराँव जनजाति की सांस्कृतिक पहचान है। भाषा के माध्यम से उनकी परंपराएँ, लोककथा और सांस्कृतिक मूल्य पीढ़ी–दर–पीढ़ी आगे बढ़ते रहे है। उराँव समाज में गोत्र व्यवस्था, पारिवारिक संबंध तथा आपसी सहयोग उनके समाज की मजबूती का आधार है। समाज में समानता, श्रम और पारस्परिक सहायता की भावना प्रमुख रही है जिसने उन्हें कठिन परिस्थितियों में भी संगठित बनाए रखा ।

Journal of Research and Development
A Multidisciplinary International Level Referred and Double Blind Peer Reviewed, Open Access
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-18, Issue-1(A)| January - 2026

इतिहास में उराँव जनजाति को अनेक सामाजिक, आार्थिक और सांस्कृतिक चुनौतियों का सामना करना पड़ा है। बाहरी प्रभावो, प्रशासनिक बदलाओं और आधुनिक जीवन पद्धति के दबावों ने उनके पारंपरिक जीवन को प्रभावित किया। इसके बावजूद उराँव समाज ने अपनी मूल पहचान भाषा और सांस्कृतिक मूल्यों को पूरी तरह खोने नहीं दिया। उन्होंने समय के साथ परिवर्तन को स्वीकार करते हुए जड़ो से जुड़े रहकर अपनी सांस्कृतिक निरंतरता को बनाए रखा।

अतः यह कहा जा सकता है कि उराँव जनजाति का अध्ययन केवल अतीत की जानकारी प्राप्त करने का माध्यम नही है। बल्कि यह वर्तमान और भविष्य में जनजातीय समाज की स्थिति को समझने के लिए आवश्यक है। उराँव जनजाति की सांस्कृतिक विरासत, उनकी प्रकृति – आधारित जीवन दृष्टि और उनकी सामाजिक संरचना झारखण्ड के जनजातीय इतिहास को समृद्ध करती है।

संदर्भ सूची

1. कुमार, एन. (1970), *राँची गजेटियर,* गजेटियर ब्रांच, पटना।
2. चौधरी, पी. सी, राय, (1906), *डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स ऑफ शाहाबाद,* गर्वमेन्ट ऑफ बिहार, पटना।
3. डाल्टन, ई. टी., (1872), *डिस्क्रिटिव एथनोलॉजी ऑफ बंगाल,* गवर्मेन्ट प्रेस, कलकत्ता।
4. थर्स्टन, इदगर, (1909), कास्ट एंड ट्राइब्स ऑफ साउर्दन इंडिया, गर्वमेन्ट प्रेस, मद्रास।
5. मिंज, दिवाकर, (1996*), मुण्डा एवं उराँव का धार्मिक इतिहास,* ऑरियंट पब्लिकेशसन, दिल्ली।
6. राय, एस. सी., (1915), *द उराँव ऑफ छोटानागपुर,* द ब्रहम मिशन प्रेस, कलकत्ता।
7. राय, एस. सी., (1928), *उराँव रिलिजन एण्ड कस्टम,* द इंडस्ट्री प्रेस, कलकत्ता।